COURSE - NEO CLASSICAL THEORIES

Unit-6 Phenomenological Theories

By Dr. Malti

Dept. of Sociology

अध्याय 19

फीनोमिनोलॉजिकल सिद्धान्त
(Phenomenological Theory)

इस पुस्तक में हमने कई समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का विवेचन किया है। इन सिद्धान्तों की तुलना में फीनोमिनोलॉजी एक ऐसा सिद्धान्त है जो तुलनात्मक दृष्टि से हाल में विकसित हुआ है। इसके विकास की दो मुख्य धाराएं हैं। एक धारा यूरोप की है जिसके प्रणेता *हसरेल और शूट्ज* (Hussrel and Schutz) है। इधर अमेरिका में फीनोमिलॉजिकल की जो दूसरी धारा विकसित हुयी है, उसके प्रणेता *जार्ज सान्त्याना* (George Santayana) हैं। कई बार फीनोमिलॉजी को कई विचारक सिद्धान्त का दर्जा नहीं देते और कहते हैं कि यह पद *घटना-क्रिया समाजशास्त्र* (Phenomenological Sociology) से अधिक कुछ नहीं है। वास्तव, में फीनोमिलॉजी का विकास दर्शनशास्त्र से हुआ है। इसकी सम्पूर्ण भूमिका दर्शनशास्त्रीय ही है। यूरोप की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि उर्वरक है। यहाँ मैक्स वेबर, मार्क्स, दुर्खाइम आदि विचारकों की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि उपलब्ध है और इसी कारण फीनोमिलॉजी की जो धारा यूरोप में विकसित हुयी जिसे हसरेल और शूट्ज ने पनपाया, ताकतवर है। दूसरी और अमेरिका में सान्त्याना से पोषित फीनोमिनोलॉजी अपनी जड़ें नहीं पकड़ पाया। अमेरिका के उपयोगितावाद ने इसे पनपने नहीं दिया। अब भी यह सिद्धान्त यहां अछूता ही है। एक और दुर्घटना हुयी । 1939 में शुट्ज ने इस ज्ञान शाखा को अमेरिका के अन्तःक्रियावाद के साथ जोड़ दिया और इस तरह फीनोमिनोलॉजी का विकास व्यवधान के फेर में आ गया।

फीनोमिनोलॉजी का अर्थ

अंग्रेजी भाषा का शब्द *फीनोमिनन* (Phenomenon) यूनानी भाषा से लिया गया है, जिसका अर्थ *प्रकट दर्शन* से है। समाज विज्ञान विश्व-कोष में इसकी परिभाषा में लिखा है कि *यह दर्शनशास्त्र की एक विधि जिसकी शुरूआत व्यक्ति से होती है और व्यक्ति को स्वयं के अनुभव से जो कुछ प्राप्त होता है, उसे इसमें सम्मिलित किया जाता है। स्वयं के अनुभव के बाहर जो भी पूर्व-मान्यताएं पूर्वाग्रह और दार्शनिक बोध होते हैं वे सब इसके क्षेत्र से बाहर हैं।* घटनायें अपने वास्तविक स्वरूप में जैसी भी है, कर्ता उन्हें समझता है। इस दृष्टि से फीनोमिनोलॉजी सार रूप में *व्यक्तिनिष्ठवाद* (Subjectivism) है।

नाटन्सन (Natanson) ने फीनोमिनोलॉजी को एक प्रकार का उत्प्रेरक सम्बोधन माना है। इसमें समाज की सम्पूर्ण घटनाओं के बारे में व्यक्ति की जागरूकता या चेतना होती है।

दार्शनिकों ने फीनोमिनोलॉजी की व्याख्या कई संदर्शों में की है। मुख्य बात यह है कि फीनोमिनोलॉजी के विचारक एक बुनियादी समस्या से जुड़े हुए हैं। उनका एकमात्र उद्देश्य समाज या दुनिया की *वास्तविकता* (Reality) को जानना है। आखिर, वास्तविकता क्या है? दुनिया में कौनसी वस्तुएँ अस्तित्व रखती है? और यदि दुनिया में जो कुछ वास्तविकता है जिसका अस्तित्व है, उसे जानने की पद्धति क्या है? क्या दर्शनशास्त्र या कोई समाज विज्ञान दुनिया की वास्तविकता को समझ भी सकता है? इन प्रश्नों के उत्तर में फीनोमिनोलॉजी का कहना है कि समाज की वास्तविकता को जानने का तरीका केवल एक है और वह है *व्यक्ति का अनुभव*। दुनिया में जो कुछ भी वास्तविक है उसे व्यक्ति अपनी इंद्रियों और मानसिक प्रक्रियाओं के द्वारा अनुभव करता है। *दूसरे लोगों का अस्तित्व, उनके मूल्य और मानक और भौतिक वस्तुओं के अस्तित्व को लोगों की चेतना और जागृति द्वारा ही जाना जा सकता है। कोई भी मनुष्य प्रत्यक्ष या सीधा समाज के यथार्थ को नहीं जान सकता। इस यथार्थ को समझने में मनुष्य की चेतना और उसके मस्तिष्क की क्रियाशीलता महत्वपूर्ण है।* हमारा जो कुछ ज्ञान समाज के बारे में है वह सब चेतना या मस्तिष्क के सम्पर्क के माध्यम से हैं।

फीनोमिनोलॉजी हमसे एक आग्रह करता है कि हम उन सब बातों को स्वीकार न करें जिन्हें हमने विवाद से पढ़े और हर तरह से स्वीकार कर लिया है। होना यह चाहिये कि हम दुनिया की वस्तुओं को किस तरह से देख रहे हैं, देखना बन्द करें। हमें एक अजनबी या अनजान की तरह हमारे इर्द-गिर्द की वस्तुओं को देखना चाहिये और उन्हें हर तरह के प्रश्नों के घेरे में लाना चाहिये। उदाहरण के लिये कोई आदमी आपके पास आता है और यदि आप हमारी इस पुस्तक को पढ़ रहे हैं तो पूछेगा कि यह पुस्तक क्या है? आपको यह प्रश्न बेतुका लगेगा। प्रश्न पूछने वाले को जानना चाहिये कि लोग पुस्तकें ज्ञान प्राप्त करने के लिये पढ़ते हैं, जानकारी लेने के लिये पढ़ते हैं। लेकिन यदि आपको प्रश्न पूछने वाला व्यक्ति इस दुनिया के लिये अजनबी है और अंतरिक्ष से उतर कर सीधा आपके पास आया

है तो वास्तव में आपकी उसके प्रति पूरी सहानुभूति होगी। यह इसलिये कि इस दुनिया में पुस्तक के बारे में लोगों के क्या विचार हैं, आखिर पुस्तक क्या है, इसका उसे कोई ज्ञान नहीं है। इसी कारण वह ऐसे प्रश्न आपके सामने रखता है। फीनोमिनोलॉजी का सिद्धान्तवेत्ता अंतरिक्ष से आये हुये इस अजनबी की तरह होना चाहिये। हमारे आस-पास जो कुछ हो रहा है उसे हमें ज्यों का त्यों स्वीकार नहीं करना चाहिये। समाज की घटनाओं के बारे में बराबर प्रश्न पूछने चाहिये : आखिर ये वस्तुएँ क्या हैं? ऐसा समाज में क्यों होता है? वस्तुओं का वास्तविक स्वरूप क्या है? आदि।

समाज कुछ इस तरह चलता है कि हमारे दिन-प्रतिदिन काम में आने वाली वस्तुएं, खान-पान, कपड़ा-मकान, तीज-त्यौहार, समाज द्वारा बनायी गयी धरोहर के रूप में हमारे जीवन में है। जो कुछ हम करते हैं, मानते हैं वह सीखी हुई संस्कृति है क्योंकि यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी से हमारे पास आयी है। हम कमीज पहनते हैं, जूते पहनते हैं और इसी तरह शाकाहारी भोजन करते हैं, राखी-दीवाली मनाते हैं, संस्कृति के ये सब तत्व हमारी विरासत हैं। फीनोमिनोलॉजी का आग्रह है कि जो कुछ हमारी सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक विरासत है, उसे ज्यों का त्यों स्वीकृत नहीं करना चाहिये। फीनोमिनोलॉजी तो इस सम्पूर्ण विरासत, इससे जुड़ी हुयी मान्यताओं को आलोचनात्मक दृष्टि से लेता है। इन्हें स्वीकारने की चुनौती देता है। जहां प्रकार्यवादी समाज के मानक और मूल्यों को स्वीकार करना आवश्यक समझते हैं, उनके अस्तित्व के प्रति प्रश्नचिन्ह नहीं खड़ा करते, वहां फीनोमिनोलॉजी का संदर्श इन सब मान्यताओं को चुनौती देता है। उदाहरण के लिये हम हमारे समाज में स्त्रियों की दशाओं को देखें तो हम ऐसा समझते हैं कि पिछली शताब्दियों में हमने बराबर स्त्रियों को गैर-बराबरी का दर्जा दिया है। चुल्हे से लेकर घर के बाहर तक हमने स्त्रियों की स्थिति को त्रासदीपूर्ण बना दिया है। स्त्रियों के प्रति हमारे विचार अतीत ने बनाये हैं। हमें ऐसा ही समझाया गया है, हमें कुछ ऐसा ही सिखाया गया है। फीनोमिनोलॉजी का सिद्धान्तवेत्ता स्त्रियों के प्रति इस तरह की पूर्वाग्रह ग्रसित धारणा को नहीं रखता। वह तो पूछता है : क्या स्त्रियों के लिये यह प्राकृतिक है कि बच्चों के प्रजनन के बाद वे उनका पालन-पोषण भी करें? यह तो समझ में आता है कि आदमी प्रजनन नहीं कर सकता लेकिन यह कहां तक सही है कि प्रजनन करने के बाद भी बच्चे के पालन पोषण का उत्तरदायित्व भी उसी का है। बच्चों को जन्म देना तो प्राकृतिक व जैविकीय है, लेकिन उनका प्रजनन सामाजिक है। फिर इस प्रश्न का उत्तर क्या है, फीनोमिनोलॉजी पूछता है। आगे और ऐसे ही कई प्रश्न फीनोमिनोलॉजी के सिद्धान्तवेत्ता पूछ सकते हैं। आज नारी आन्दोलन जिन मुद्दों पर उठाया जा रहा है, वस्तुतः वे मुद्दे फीनोमिनोलॉजी के हैं। सच्चाई यह है कि फीनोमिनोलॉजी उन प्रश्नों को पूछता है जिन्हें सामाजिक व्यवस्था ने पूरी तरह स्वीकार कर लिया है, जो हमारी सांस्कृतिक-सामाजिक विरासत के अंग बन गये हैं, जो हमारी दिन प्रतिदिन की गतिविधियों को संचालित व नियंत्रित करते हैं।

फीनोमिनोलॉजी की खोज वस्तुओं के अस्तित्व को ढूंढने की है। इसका प्रश्न है- आखिर समाज में वास्तविक और सच्चाई क्या है? यदि हम हमारे देश में दलितों की सामाजिक-आर्थिक दशा को देखे तो हमारा दिल दहल जायेगा। इन वर्गों में कुछ लोग ऐसे हैं जो दिन में एक जून खाना खाकर जीवित हैं। सदियों से हमने इन वर्गों को समाज के हाशिये पर त्रासदी झेलने के लिये छोड़ दिया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हमने पहली बार संवैधानिक रूप से दलितों की समस्याओं के निदान के लिये सृजनात्मक विकास कार्यक्रम तैयार किये। लेकिन *दलितों की वास्तविक स्थिति के बारे में जो प्रश्न पूछे गये कि आखिर दलितों को हाशिये पर क्यों रखा गया, उन्हें उचित मानवीय व्यवहार क्यों नही प्राप्त हुआ, आदि सारे प्रश्न वस्तुतः फीनोमिनोलॉजी के प्रश्न हैं।* फीनोमिनोलॉजीकल समाजशास्त्र परम्परा से पीड़ित दलितों के उद्धार की बात करता है। ऐसी आशा की जाती है कि यदि फीनोमिनोलॉजीकल समाजशास्त्र को विकास की सही दिशा दी जाये तो शायद समाज की वास्तविकता को समझने में हमारे संदर्श की धार अधिक तेज हो जायेगी। हमारी अर्न्तदृष्टि गहरी हो जायेगी।

फीनोमिनोलॉजी के आधार (Roots)

आज फीनोमिनोलॉजी के सम्बन्ध में जो कुछ हम पढ़ते हैं उन सबकी जड़ें यूरोप के फीनोमिनोलॉजीकल दर्शन में है। विशेषकर *एडमंड हसरेल* (Edmund Hussrel, 1959-1938) की कृतियों में। हसरेल पहले विचारक थे जिन्होंने फीनोमिनोलॉजी पद को काम में लिया, परिभाषित किया और एक विद्या के रूप में विकसित किया। उनके अनुसार *फीनोमिनोलॉजी की रूचि उन वस्तुओं को जानने में है जिनका बोध व्यक्तियों को अपनी इन्द्रियों द्वारा होता है।* फीनोमिनोलॉजी के बारे में यह एक अनिवार्य बिन्दु है। यह विद्या कहती है कि अपने प्रत्यक्ष अनुभव को, जिन्हें हम अपनी इन्द्रियों द्वारा प्राप्त करते हैं, उसे किसी और उपागम द्वारा नहीं जाना जा सकता। घटनाओं के बारे में हमारा सम्पूर्ण ज्ञान इन्द्रीयजन्य है। इसके अतिरिक्त वस्तुओं के बारे में हमारे जो कुछ बयान हैं, केवल अटकलबाजी है। हसरेल तो यहाँ तक कहते हैं कि हमें इस तरह की अटकलबाजी से हमेशा दूर रहना चाहिये। समाजशास्त्र से हसरेल को फीनोमिनोलॉजी का जनक समझा जाता है।

फीनोमिनोलॉजिकल समाजशास्त्र वह समाजशास्त्र है जो इन्द्रियों द्वारा वस्तुओं को जैसे देखता है, वैसी ही उसकी निश्चित व्याख्या करता है। प्रायः ऐसा होता है कि वस्तुओं के बारे में एक व्यक्ति का जैसा प्रत्यक्ष ज्ञान है वैसा ही कुछ दूसरे लोगों का भी ज्ञान होता है। जब सभी लोगों के प्रत्यक्ष ज्ञान को जो दिन-प्रतिदिन की दुनिया में देखने को मिलता है, उन्हें हम सम्मिलित कर लेते हैं। यही हमारा समाज या दुनिया के बारे में सम्मिलित या समग्र ज्ञान है।

हसरेल के बाद जर्मनी के *शूट्ज* (Schutz) का योगदान भी महत्वपूर्ण है। वे एक सामाजिक दार्शनिक थे जो 1939 में नाजी प्रशासन की तबाहियों से परेशान होकर अमेरिका आ गये। दिन में वे एक बैंक में काम कर जीवनयापन करते थे और सायंकाल में सामाजिक दर्शनशास्त्र को पढ़ाते थे। 1952 में वे समाजशास्त्र के प्रोफेसर हो गये। उनका देहान्त 1959

में हुआ। यह उन्हीं के प्रयत्नों का परिणाम है कि अमेरिका में फीनोमिनोलॉजी एक समाजशास्त्र की हैसियत से प्रतिष्ठित या मान्य हुआ।

जब हम प्रश्न उठाते हैं कि वे कौन से कारण थे जिन्होंने फीनोमिनोलॉजी को यूरोप और अमेरिका में जन्म दिया? इसका उत्तर बड़ा दिलचस्प है। यूरोप में नाजी सल्तनत थी। फासीवाद चल रहा था। जन जीवन में तबाही थी। लोग कराह रहे थे। ऐसी राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक दशा में हसरेल को लगा कि यह सब आतन्क क्यों? नाजी हुकूमत जर्मनवासियों का दमन क्यों कर रही थो? इस और ऐसे ही अनेकों प्रश्नों ने हसरेल को बाध्य किया कि वे घटनाओं के विश्लेषण के लिये फीनोमिनोलॉजी को विकसित करें। इसी अवधि में *पीटर बर्जर* (Peter Berger) ने भी अपनी कृतियों द्वारा कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न रखे। अमेरिका में छठे दशक में सामाजिक अशांति थी। वहां नागरिक अधिकारों का आन्दोलन उग्र रूप ले रहा था। इधर नारी आन्दोलन ने भी अपना सिर उठा रखा था। इन सामाजिक दशाओं में अमेरिका में शुट्ज और सन्त्याना ने *फीनोमिनोलॉजी* को एक आन्दोलन के रूप में विकसित किया।

यह आश्चर्यजनक नहीं है कि जब यूरोप व अमेरिका में सामान्य जनजीवन शोषण व दमन के शिकंजे में आ गया, तब लगा कि परम्परागत मान्यताओं, पूर्वाग्रहों आदि को भूलकर समाज विज्ञानवेताओं को कुछ बुनियादी प्रश्न रखने चाहिये। इस संदर्भ में देखें तो फीनोमिनोलॉजी सिद्धान्त न होकर, एक समाजशास्त्रीय विद्या या उपागम है जो सामाजिक सांस्कृतिक धरोहर को लोक जीवन की मान्यताओं व मुहावरों को संदेह के संदर्श में देखता है। जितना संदेह गहरा होगा, इस विद्या की धार उतनी ही पैनी होगी।

फीनोमिनोलॉजी को बौद्धिक आधार देने में तीन विचारकों के योगदान को महत्वपूर्ण समझा जाता है। इन विचारकों में हसरेल, शूट्ज और सन्त्याना है। जहां हम इन विचारकों की फीनोमिनोलॉजी समाजशास्त्र के बारे में व्याख्या करेंगे।

फीनोमिलोलॉजिकल समाजशास्त्र विकसित नही हो पाया। अमेरिका के समाजशास्त्र ने हसरल और शूट्ज को तो स्वीकार किया, लेकिन अपने ही देश के सन्त्याना को नकार दिया। कोई भी सिद्धान्त अपने निकटतम समाज से विसंगत होकर, अपनी जड़ें नहीं जमा सकता।

अल्फ्रेड शूट्ज का फीनोमिनोलॉजिकल समाजशास्त्र

(Alfred Schutz, 1899-1959)

अलफ्रेड शूट्ज राष्ट्रीयता की दृष्टि से जर्मन थे। वे नाजी सरकार की ज्यादतियों से परेशान होकर 1939 में जर्मनी से अमेरिका भाग आये। उन्होंने अमेरिका के समाजशास्त्र में फीनोमिनोलॉजी को प्रस्तुत किया। शूट्ज की बहुत बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने हसरल के दर्शन को समाजशास्त्र में स्थापित किया। शूट्ज ने जीवन-जगत की चर्चा नहीं की है। लेकिन उनका मानना है कि *ज्ञान का एक विशाल भण्डार* (Stock of Knowledge) होता है जिसमें से प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी ज्ञान को प्राप्त करता है। जिसे हम पुस्तक, रेलगाड़ी, आवास, पोषाक, भोजन, परिवार, जाति, वर्ग आदि समझते हैं वह और कुछ न होकर ज्ञान के विशाल भण्डार का एक अंग हैं। ज्ञान के भण्डार की ये विभिन्न वस्तुएं कई प्रकार की श्रेणियों में पायी जाती हैं। एक व्यक्ति इन श्रेणियों को जिन्हें वेबर *आदर्श प्रारूप* (Ideal Type) कहते हैं, ग्रहण करता है और आने वाली पीढ़ी को देता है। लेकिन शूट्ज के सम्बन्ध में ऐसा निष्कर्ष यहां देना शायद उतावलापन होगा। हम सिलसिले से शूट्ज की *फीनोमिनोलॉजी* को समझेंगे।

शूट्ज द्वारा दिया गया फीनोमिनालॉजी का सिद्धान्त

ई. 1939 में जब शूट्ज अमेरिका आये तो यहां के अकादमिक क्षेत्र में उनका कई विचारकों से सम्पर्क हुआ। इन्हीं दिनों में उनकी पुस्तक *द फीनोमिनालॉजी ऑफ द सोशल वर्ल्ड* (The Phenomenology of the Social World, 1967) का अंग्रेजी में अनुवाद हुआ।

इसके परिणामस्वरूप अमेरिका के समाजशास्त्री इनकी विचारधारा से परिचित हुए। यहां आकर उन्होंने अपने सिद्धान्त को निर्णायक रूप में रखा। उनका योगदान उनकी इस क्षमता में है कि उन्होंने हसरल के क्रान्तिकारी *फीनोमिनोलॉजी* का तेजी से विकास शुरु हुआ। *दूसरा* परिणाम यह कि इनकी फीनोमिनोलॉजी ने *इथनोमेथडोलॉजी* को जन्म दिया। और तीसरा, शूट्ज की *फीनोमिनोलॉजी* ने सम्पूर्ण सैद्धान्तिक संघर्ष को एक परिष्कृत रूप दिया।

शूट्ज का कृतित्व मैक्स वेबर की आलोचना से प्रारम्भ होता है। शूट्ज ने अपनी पुस्तक में और फुटकर निबन्धों में मैक्स वेबर की *सामाजिक क्रिया* (Social Action) की अवधारणा का अत्यधिक प्रयोग किया है। सामाजिक क्रिया तब होती है जब कर्ता एक दूसरे से परिचित होते हैं। इसके उपरान्त समाज दशा में कर्ता एक ही अभिप्राय को निकालते हैं। उदाहरण के लिये जब विवाह में बाराती सम्मिलित होते हैं तो वे सभी विवाह का अभिप्राय एक ही समझते हैं। यहां उनके अभिप्राय में कोई अन्तर नहीं होता। वेबर ने दृढ़तापूर्वक कहा

कि समाज के किसी भी विज्ञान को सामाजिक वास्तविकता के अभिप्राय को सही तरह से समझना चाहिये। वास्तविकता के विश्लेषण में अभिप्राय (Meaning) सर्वाधिक महत्वपूर्ण होते हैं। समाजशास्त्रीय अनुसंधान में हमारा प्रयत्न होना चाहिये कि हम लोगों की चेतना में प्रवेश करें और देखें कि लोग वस्तुओं को किस दृष्टि से देखते हैं, उन्हें किस प्रकार परिभाषित करते हैं और उनका क्या अभिप्राय लेते हैं? अध्ययन की इस प्रक्रिया में वेबर वेरस्टेहेन (Verstehen) यानी समझ या अभिप्राय की विधि को अपनाते हैं। किसी भी दशा में अनुसंधान कर्ता वस्तुओं के अन्दर पहुंच कर व्यक्तिनिष्ठ अर्थ को निकालता है। वेबर बराबर इस बात पर जोर देते हैं कि *अन्तःक्रिया* में व्यक्तियों द्वारा दिया गया अभिप्राय वास्तविक क्रिया है। यदि इस क्रिया में व्यक्ति का अभिप्राय निहित नहीं है तो यह क्रिया गतिविधि मात्र है। हम पुस्तकालय जाते हैं और कोई हमसे पूछे कि पुस्तकालय क्यों जा रहे हो तो हमारा अभिप्राय यदि अध्ययन का है, मनोरंजन का है, गप्प लगाने का है – जो भी अभिप्राय है और इसकी परिभाषा हम भी देंगे तब तो हमारी यह गतिविधि क्रिया है, अन्य का यह तो गतिविधि मात्र है। अतः क्रिया के किसी भी विश्लेषण में वेबर का आग्रह है कि *अभिप्राय* महत्वपूर्ण है।

शूट्ज ने अपनी मुख्य पुस्तक में सबसे पहले क्रिया की अवधारणा को उठाया है। शूट्ज ने विस्तारपूर्वक क्रिया की अवधारणा का आलोचनात्मक विश्लेषण किया। यहां शूट्ज वेबर की कटु आलोचना करते हैं। वेबर वेरस्टेहेन विधि को तो काम में लाते हैं लेकिन इस तथ्य को समझाने में असफल रहे है कि कर्ता क्यों और कैसी प्रक्रियाओं द्वारा सामान्य अभिप्राय निकालते हैं? पिछले दृष्टान्त में यदि बाराती विवाह में सम्मिलत होने का अभिप्राय मौज-मजा, खान-पान आदि से निकालते हैं तो वे किन प्रक्रियाओं द्वारा किन कारणों से इस अभिप्राय पर पहुँचे हैं? दूसरे शब्दों में वे कौन से समाजशास्त्रीय कारक हैं जो कर्ताओं को इस सर्वसम्मत निष्कर्ष पर पहुँचाते हैं? शूट्ज का कहना है कि शायद वेबर यह मानकर चले हैं कि सभी कर्ता व्यक्ति निष्ट अभिप्राय के भागीदार हैं। जब वेबर यह मानकर चलते हैं तो शूट्ज स्वाभाविक रूप से पूछते हैं : वे कौन से सामाजिक कारक हैं जो एक निश्चित अवस्था में (जैसे विवाह) कर्ता को एक समान अभिप्राय पर पहुंचाने के लिये उत्तरदायी हैं? वे किस तरह से एक ही दृष्टिकोण वाली दुनिया को पैदा करते हैं? वास्तव में यह समस्या *अन्तर्व्यक्ति निष्ठता* (Intersubjectivity) की है। शूट्ज की बौद्धिक योजना में *अन्तर्व्यक्ति निष्ठता* का स्थान केन्द्रीय है। शूट्ज की अवधारणा की टीका करते हुए *रिचार्ड जेनर* (Richard D. Zaner) कहते है–

> यह कैसे सम्भव है कि यद्यपि मैं आपके विचारों से सहमत नहीं हूँ, आपकी प्रेम और घृणा की जो भावना है उसे मैं ठीक नहीं समझता, आपके व्यवहार से मैं सन्तुष्ट नहीं हूं, फिर भी मैं आपके विचारों से, भावना से और अभिवृतियों से भागीदारी रखता हूं, शूट्ज के लिये वास्तविक समस्या अन्तर्व्यक्ति निष्ठावाद की है।

जेनर ने जो भी आपत्ति उठाई है, उसकी व्याख्या इस प्रकार है। शूट्ज कहते हैं कि *प्रत्येक क्रिया का अर्थ या उसका अभिप्राय कर्ता निकालता है।* समाज में सभी कर्ता विभिन्न दशाओं में या एक ही दशा में अपना व्यक्तिनिष्ठ अभिप्राय देते हैं। हमारे पिछले अध्याय में प्रत्येक कर्ता का व्यक्तिनिष्ठ अभिप्राय वह है कि विवाह में लोग मौज-मजा करते हैं। लेकिन सवाल यह है कि जब एक कर्ता का व्यक्तिनिष्ठ अर्थ दूसरे कर्ता के व्यक्तिनिष्ठ अर्थ से सहमति नहीं पाता, फिर कैसे विभिन्न व्यक्तिनिष्ठ अर्थ वाले कर्ता एक ही विचार से अपनी सहमति मानते हैं। यह द्विविधा शूट्ज की है और वास्तव में यह सम्पूर्ण समस्या अन्तर्व्यक्ति निष्ठावाद की है।

अपने जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में शूट्ज हसरेल के फीनोमिनोलॉजी से अधिक प्रभावित थे, मीड का कृतित्व उन्हें किसी तरह से अभिप्रेरित नहीं करता था। बाद में चलकर शूट्ज हसरल से भी अलग हो गये। हसरल जब *व्यक्ति को आमूल चूल अमूर्त* (Radical Individual Abstraction) रूप से रखना चाहते हैं, एक विशुद्ध मस्तिष्क की खोज करना चाहते हैं तब शूट्ज उनसे असहमत नजर आते हैं। शूट्ज का आग्रह है कि चेतना के कोई अमूर्त नियम नहीं बनाये जा सकते। दूसरी ओर शूट्ज हसरेल की कतिपय धारणा को बिना किसी विवाद के स्वीकार करते हैं। व्यक्ति जीव जगत को जैसा भी वह है, स्वीकृत किया हुआ (Taken for granted) मानते हैं। शूट्ज हसरेल की इस धारणा से भी सहमत है कि लोग जीव-जगत के सभी तत्वों को समान रूप से एक जैसा समझते हैं। शूट्ज यह भी स्वीकार करते हैं कि जीव-जगत को समझे बिना व्यक्ति को नहीं समझा जा सकता।

शूट्ज जब अमेरिका आये तो उनकी फीनोमिनोलॉजी पर प्रारम्भिक प्रतीकात्मक अन्तःक्रियावादियों और विशेषकर मीड व थॉमस का प्रभाव पड़ा। वास्तविकता यह है कि *सभी मनुष्यों के मस्तिष्क में उचित व्यवहार करने के लिये नियमों उपनियमों आदि की निश्चित धारणा होती है।* शूट्ज ने हसरल की जीवन-जगत की अवधारणा को भी विस्तार में रखा। मनुष्यों के मस्तिष्क में जीव-जगत के नियमों, मूल्यों, मानक और वस्तुओं के बारे में जो बोध या ज्ञान है, उसे तुरन्त उपलब्ध होने वाला *ज्ञान का भण्डार* (Stock Knowledge) कहते हैं। ज्ञान का जो भण्डार मनुष्य के मस्तिष्क में है वह मनुष्य की क्रियाओं को दिशा है।

ज्ञान का भण्डार एक ऐसी अवधारणा है जिसका अत्यधिक प्रयोग शूट्ज ने किया है। यहां हम इसकी विस्तार से व्याख्या करेंगे।

ज्ञान के भण्डार के लक्षण

(Features of Stock Knowledge)

शूट्ज की अवधारणा को जिसे हम हिन्दी में *ज्ञान का भण्डार* कहते हैं, उसे ही अंग्रेजी में *स्टोक नोलेज* (Stock Knowledge) कहते हैं। मस्तिष्क की चेतना मे जीव-जगत के बारे में जो भी जानकारियां हैं वे सब व्यक्ति के ज्ञान का भण्डार है जिसे वह दिन प्रतिदिन के व्यवहार में काम में लाता है। उदाहरण के लिये हमारा ज्ञान का भण्डार बताता है कि आज

किसी भी नौकरी के लिये गला काटने वाली प्रतियोगिता करनी पड़ती हैं, हमारा ज्ञान बताता है कि मंहगाई बहुत अधिक है, हमारी चेतना कहती है राजनीति का अपराधीकरण हो गया है, आदि। ये सब वस्तुएं जीव-जगत की है। और जीव जगत के बारे में हमारे मस्तिष्क और चेतना में जो कुछ है उसे शूट्ज ज्ञान का भण्डार कहते हैं। इसके लक्षण निम्न हैं :

1. मनुष्यों के लिये वास्तविकता वह है जो उनका ज्ञान का भण्डार है। समाज के सदस्यों के लिये ज्ञान का भण्डार *सर्वोच्च वास्तविकता* (Paramount Reality) है। यह वास्तविकता सभी सामाजिक घटनाओं को स्वरूप देती है, और नियंत्रित करती है। *कर्ता जब दूसरों के साथ व्यवहार करते हैं तो इसी ज्ञान के भण्डार का प्रयोग वास्तविकता के रूप में काम में लाते हैं।*
2. यह ज्ञान का भण्डार लोगों में यह भावना पैदा करता है कि यही जीव-जगत की यानि दुनिया व समाज की वास्तविकता है। इस यथार्थ को व्यक्ति स्वीकृत मानकर अर्थात *टेकन फार ग्रान्टेड* (Taken for granted) चलता है। कोई भी व्यक्ति चेतन रूप से यह नहीं सोचता कि उसे अपनी क्रियाओं में इस ज्ञान के भण्डार को काम में लाना है। वास्तविकता तो यह है कि यह ज्ञान का भण्डार अचेतन रूप से बड़े ही सरल व सहज ढंग से उसके व्यवहार को नियमित करता है। जब हम अपने बुजुर्गों को देखते हैं तो चेतन होकर यह नहीं सोचते कि उन्हें मिलते ही अभिवादन करेंगे, उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखेंगे। इस क्षेत्र में हमारे ज्ञान का भण्डार बहुत स्पष्ट है : अपने से बड़ों का आदर करो और स्वाभाविक रूप से हमारा व्यवहार सम्मानीय बन जाता है।
3. ज्ञान का भण्डार सीखा जाता है, विरासत में मिलता है। यह जन्मजात नहीं मिलता। समान सामाजिक - सांस्कृतिक दुनिया में ज्ञान के भण्डार को समाजीकरण द्वारा सीखा जाता है। यही व्यवहार बाद में चलकर व्यक्ति का अपना हो जाता है।
4. जब मनुष्य ज्ञान के भण्डार की मान्यता को लेकर व्यवहार करता है तो इस तरह का पारस्परिक व्यवहार दूसरे लोग भी करते हैं। जो व्यक्ति हमारे साथ व्यवहार करता है उसे ज्ञात है कि हमारे ज्ञान का भण्डार क्या है। अभिवादन के लिये जब हम हाथ जोड़ते हैं तो सामने वाला व्यक्ति भी हाथ जोड़ता है। हम दोनों के जो ज्ञान का भण्डार है उसके दोनों ही भागीदार हैं। इसी कारण पारस्परिकता निभ जाती है।
5. *ज्ञान के भण्डार का अस्तित्व : समाजीकरण द्वारा इसे प्राप्त करना, तथा अन्तःक्रियाओं के लिये ज्ञान के भण्डार का पारस्परिक संदर्शों का आदान-प्रदान केवल समान ज्ञान के भण्डार के कारण है। अर्थात सभी कर्ताओं के लिये जीव-जगत या समाज एक समाज है। और इसी कारण क्रियाओं में समान व्यवहार मिलता है। समाज की एकता में बनाये रखने का कारण सबकी एक जैसे जीव-जगत में भागेदारी है।*
6. समाज बहुत वृहद् है। इसमें कई विभिन्नताएं हैं, कई विशेषताएं हैं। इन सबको विविध *श्रेणियों* (Types) में रखा जाता है। जैसी श्रेणी होगी वैसा ही व्यक्ति के व्यवहार का

अनुकूलन होगा। बम्बई महानगर है। इसमें कई विविधताएं हैं। एक पूरा समुदाय फिल्म उद्योग में हैं, एक समूह औद्योगिक है, इसी महानगर में ऐसे समूह भी है जो पूर्ण रूप से व्यावसायिक है। ये सब विशेषताएं श्रेणियां है। यहां के लोग इन सब श्रेणियों में अनुकूलन करके व्यवहार करते हैं। जटिल समाजों में जीव–जगत भी जटिल हो जाता है।

यदि हम शूट्ज के फीनोमिनोलॉजी समाजशास्त्र को देखें और विशेषकर जिस ज्ञान के भण्डार के लक्षणों का विवरण उन्होंने दिया है तो स्पष्ट हो जायेगा कि शूट्ज ने यूरोप की फीनोमिनोलॉजी और अमेरिका के अन्तःक्रियावाद का अच्छा सम्मिश्रण किया है। जब शूट्ज ज्ञान के भण्डार की चर्चा करते हैं, तो स्पष्ट रूप से वे हसरेल से प्रभावित हैं। हसरेल से उधार लेकर भी वे हसरेल की इस मान्यता को स्वीकार नहीं करते कि चेतना की प्रक्रियाएं जो व्यक्ति में होती है, का अमूर्तिकरण हो जाता है। हसरेल की इस असफलता पर ही शूट्ज अन्तर्वैयक्तिक निष्ठावाद की समस्या को एक मुद्दा बनाते हैं। इस विवाद के कारण ही शूट्ज पुनः हसरेल के जीव–जगत की व्याख्या करते हैं।

उपसंहार

हम बराबर आग्रह करते रहे हैं कि समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का उद्देश्य समाज को समझना रहा है। *फीनोमिनोलॉजी* समाजशास्त्र चेतना, मस्तिष्क और जीव–जगत आदि अवधारणाओं द्वारा समाज की वास्तविकताओं का अध्ययन करता है। समाज वैज्ञानिकों के लिये मुख्य मुद्दा तो यह जानने का है कि हमारे इस समाज में *वास्तविकता* क्या है? किसे हम यथार्थ समझते हैं? और कौन केवल फरेब है? यथार्थता की यह व्याख्या *वृहद् समाजशास्त्री* (Macro Sociologists) और सूक्ष्म समाजशास्त्री (Micro Sociologists) दोनो करते हैं।

समाज वैज्ञानिकों के इन विवादों में शूट्ज का यह कहना है कि जीव–जगत के बारे में जो कुछ हमारी जानकारी है वह हमारे ज्ञान के भण्डार के अंग हैं। यह ज्ञान का भण्डार जो व्यक्ति के मस्तिष्क में हैं, समाजीकरण द्वारा प्राप्त होता है। जिसे मैक्स वेबर *वरस्टेहेन* कहते हैं, उसे शूट्ज व्यक्ति निष्ठावाद के पद द्वारा परिभाषित करते हैं। शूट्ज के लिये जो कुछ हमारा ज्ञान का भण्डार है वही समाज या दुनिया की यथार्थता या वास्तविकता है। जिसे मीड *सामान्यीकृत अन्य* (Generalised Other) कहते हैं, उसे शूट्ज ज्ञान का भण्डार कहते हैं। विशुद्ध रूप से शूट्ज का फीनोमिनोलॉजी समाजशास्त्र कई स्त्रोतों से धारणाओं को लेकर अपने आपको बनाता है। शूट्ज के विषय में यह सब लिखते हुए हमें याद रखना चाहिये कि उनके लेखन का बहुत बड़ा मुहावरा यथार्थता या वास्तविकता की खोज है। वे जानना चाहते हैं : आखिर जिन वस्तुओं का अस्तित्व है वह क्यों और कैसे है? शूट्ज ही क्यों हसरेल ने भी जिन सामाजिक आर्थिक व राजनैतिक दशाओं में फीनोमिनोलॉजी को जन्म दिया, वे दशाएं ही कुछ ऐसी थी। हसरेल ने नाजीवाद के दमन को भोगा था। शूट्ज भी इसी के शिकार थे। सन्त्याना ने भी अमेरिका में

सब राष्ट्रीय समस्याओं ने हसरेल और शूट्ज को यह जानने के लिये बाध्य कर दिया कि आखिर इस दुनिया में कौन से तत्व वास्तविक और यथार्थ हैं।

यद्यपि शूट्ज फीनोमिनोलॉजी समाजशास्त्र के विकास में अधिक कुछ नहीं कर पाये, यद्यपि शूट्ज हसरेल से आगे नहीं निकल पाये, यद्यपि शूट्ज फीनोमिनोलॉजी के किसी सिद्धान्त को नहीं बना पाये, फिर भी यह सत्य है कि उन्होंने एक सीमा एक फीनोमिनोलॉजी को नये क्षितिज दिये, कुछ नये तेवर दिये और यह उन्हीं के परिणामस्वरूप है कि हमारा सैद्धान्तिक संदर्श सुदृढ़ हुआ और इथनोमैडोलॉजी एक विशेष ज्ञान शाखा के रूप मे उभर कर हमारे सामने आयी।